पंद्रहवां अध्याय

।। सारांश।।

''गीता अध्याय 15 श्लोक 1-4 का सारांश''

।। सष्टि रूपी वक्ष का वर्णन।।

अध्याय 15 के श्लोक 1 में कहा है कि ऊपर को पूर्ण परमात्मा रूपी जड़ वाला नीचे को तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिवजी) रूपी शाखा वाला संसार रूपी एक अविनाशी विस्तत वक्ष है। जैसे पीपल का वक्ष है। उसकी डार व साखाएँ होती हैं। जिसके छोटे-छोटे हिस्से (टहनियाँ) पते आदि हैं। जो संसार रूपी वक्ष के सर्वांग जानता है, वह वेद के तात्पर्य को जानने वाला पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी संत है। कबीर परमेश्वर जी कहते हैं :--

कबीर, अक्षर पुरुष एक पेड़ है, निरंजन (ब्रह्म) वाकि डार। तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।।
कबीर, हम ही अलख अल्लाह हैं, मूल रूप करतार। अनन्त कोटि ब्रह्मण्ड का, मैं ही सिरजनहार।।

यह उल्टा लटका हुए संसार रूपी वक्ष है। ऊपर को जड़ें (पूर्णब्रह्म परमात्मा-परम अक्षर पुरुष) सतपुरुष है, अक्षर पुरुष (परब्रह्म) जमीन से बाहर दिखाई देने वाला तना है तथा ज्योति निरंजन (ब्रह्म/क्षर) डार है और तीनों देवा (ब्रह्मा-विष्णु-महेश) शाखा हैं। छोटी टहनियाँ और पत्ते देवी-देवता व आम जीव जानों।

❖ *अध्याय 15 के श्लोक 2 में कहा है कि उस (अक्षर पुरुष रूपी) वक्ष की नीचे और ऊपर गुणों (ब्रह्मा-रजगुण, विष्णु-सतगुण, शिव-तमगुण) रूपी फैली हुई विषय विकार (काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार) रूपी कोपलें व डाली (ब्रह्मा-विष्णु-शिव) रूपी। इस जीवात्मा को कर्मों के अनुसार बाँधने का मुख्य कारण है तथा नीचे पाताल लोक में, ऊपर स्वर्ग लोक में व्यवस्थित किए हुए हैं।* (गीता जी के अध्याय 14 के श्लोक 5 में प्रमाण है कि – हे महाबाहो (अर्जुन)! सतगुण, रजगुण, तथा तमगुण जो प्रकति (माया) से उत्पन्न हुए हैं। ये तीनों गुण जीवात्मा को शरीर में बाँधते हैं।)

❖ *अध्याय 15 के श्लोक 3 में गीता बोलने वाला ब्रह्म कह रहा है कि इस (रचना) का न तो शुरु का ज्ञान, न अंत का और न ही वैसा स्वरूप (जैसा दिखाई देता है) पाया जाता है तथा यहाँ विचार काल में अर्थात् तेरे मेरे इस गीता ज्ञान संवाद में मुझे भी इसकी अच्छी तरह स्थिति का ज्ञान नहीं है। इस स्थाई स्थिति वाले मजबूत संसार रूपी वक्ष अर्थात् सष्टि रचना को पूर्ण ज्ञान रूप (सूक्ष्म वेद के ज्ञान से) शस्त्र से काट कर अर्थात् अच्छी तरह जान कर काल (ब्रह्म) व ब्रह्मा-विष्णु-शिव तीनों गुणों व पित्रों- भूतों- देवी- देवताओं, भैरों, गूगा पीर आदि से मन हट जाता है। इसलिए इस संसार रूपी वक्ष को काटना कहा है।*

अध्याय 15 के श्लोक 4 में गीता ज्ञान दाता ने बताया है कि उपरोक्त तत्वदर्शी संत जिसका गीता अध्याय 15 श्लोक 1 व अध्याय 4 श्लोक 34 में भी वर्णन है मिलने के पश्चात उस स्थान (सतलोक-सच्चखण्ड) की खोज करनी चाहिए जिसमें गए हुए साधक फिर लौट कर (जन्म-मरण में) इस संसार में नहीं आते अर्थात् अनादि मोक्ष प्राप्त करते हैं और जिस परमात्मा से आदि समय से चली आ रही सष्टि उत्पन्न हुई है। मैं काल ब्रह्म भी उसी अविगत पूर्ण परमात्मा की शरण में हूँ। उसी पूर्ण परमात्मा की ही भक्ति पूर्ण निश्चय के साथ करनी चाहिए, अन्य की नहीं।

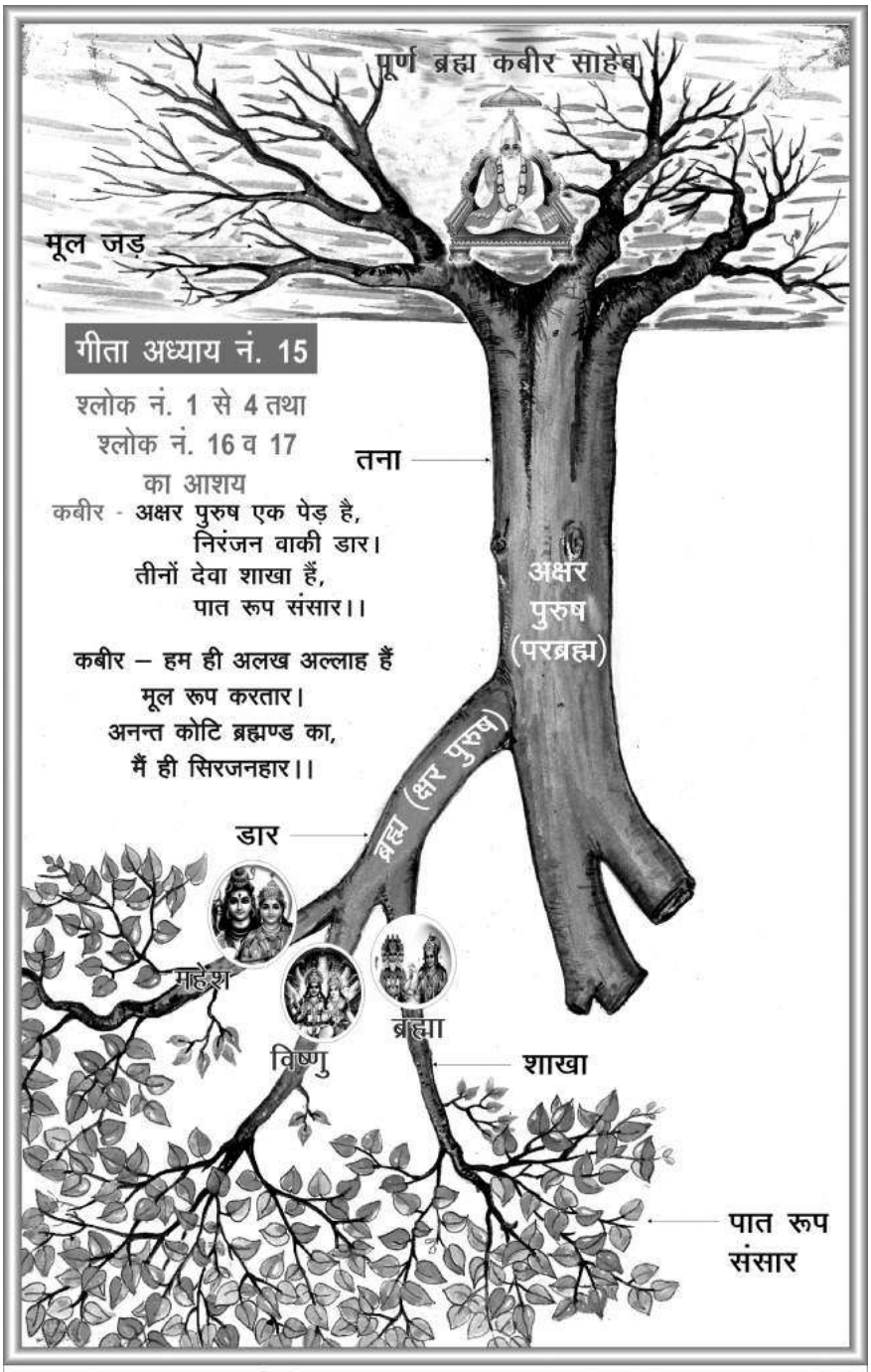

ऊपर जड़ नीचे शाखा वाला उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वृक्ष का चित्र

इसी का प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 18 मंत्र 46, 61, 62, 66 में भी है कि गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमेश्वर बताया है। उसी की शरण में जाने को कहा है तथा अपना इष्ट देव यानि पूज्यदेव भी उसी को बताया है कि मैं उसी की शरण हूँ।

अन्य प्रमाण :- गीता अध्याय 18 श्लोक 64 में यह भी प्रमाण है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि सब गोपनीय से भी अति गोपनीय वचन सुन जो तेरे हित में कहूँगा कि जिस परमेश्वर का मैंने इसी अध्याय 18 श्लोक 61, 62 में किया है, उसकी शरण में तेरे को जाने को कहा है। (इति) यह (मे) मेरा (दृढ़म् इष्टः) पक्के तौर पर पूज्य देव है।

विशेष :- अन्य अनुवादकों ने अध्याय 18 के इस श्लोक 64 में ''इष्टः'' शब्द का अर्थ प्रिय किया है जो उचित नहीं है। गीता अध्याय 9 श्लोक 20 में ''इष्टवा'' शब्द का अर्थ ''पूजा करके'' किया तथा इसी अध्याय 18 के श्लोक 70 में ''इष्टः'' शब्द का अर्थ ''पूजित'' किया है। यदि श्लोक 64 में भी ''पूजित'' कर दिया जाता तो सब ठीक हो जाता। गीता अध्याय 18 के श्लोक 63 में स्पष्ट कर दिया कि गोपनीय से भी अति गोपनीय ज्ञान मेरे द्वारा इस गीता शास्त्र में तुझे कह दिया है। जैसे उचित लगे, कर। गीता अध्याय 8 श्लोक 5 तथा 7 में अपनी भक्ति करने से अपनी प्राप्ति कही है। श्लोक 8, 9, 10 में श्लोक 3 वाले परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति कही है। उसकी भक्ति करने वाला उसको प्राप्त होगा। इस अध्याय 18 के श्लोक 64 में भी इसी को अपना इष्ट देव यानि पूजित देव बताया है।

❖ *''तत्वदर्शी सन्त की पहचान'' :-- उपरोक्त गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में कहा है कि जो सन्त संसार रूपी वक्ष के सर्व भागों को भिन्न-2 बताए, वह वेद के तात्पर्य को जानने वाला यानि तत्वदर्शी सन्त है। जो आप जी ने ऊपर पढ़ा कि संसार रूपी वक्ष की जड़े (मूल)तो परम अक्षर ब्रह्म है, तना अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म है, डार क्षरपुरूष अर्थात् ब्रह्म (काल) है तथा तीनों शाखाऐं रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिवजी है तथा पत्ते रूपी प्राणी हैं।*

दूसरी पहचान :-- गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्मलोक से लेकर सर्व लोक नाश्वान हैं। गीता अध्याय 8 श्लोक 17 में कहा है कि परब्रह्म का एक दिन एक हजार युग का होता है इतनी ही रात्रि होती है। जो इस अवधी को जानता है व काल को तत्व से जानने वाला है अर्थात् तत्वदर्शी सन्त है। कृप्या देखें गीता अध्याय 8 श्लोक 17 के अनुवाद में।

❖ *गीता अध्याय 15 के श्लोक 5-15 तक का सारांश :-*

।। पूर्ण परमात्मा की जानकारी।।

गीता अध्याय 15 श्लोक 5-6 का सारांश :-

अध्याय 15 के श्लोक 5 में कहा है कि जिनकी आसक्ति प्रत्येक वस्तु से हटकर प्रभु प्राप्ति में लग गई वही साधक उस अविनाशी परमेश्वर के अविनाशी पद को प्राप्त करते हैं तथा श्लोक 6 में कहा है कि स्वयं काल भगवान कह रहा है कि जिस सतलोक में गए साधक लौट कर संसार में नहीं आते उस सतलोक को न सूर्य, न अग्नि और न चन्द्रमा प्रकाशित कर सकते हैं। वह सत्यलोक मेरे लोक से श्रेष्ठ है तथा मेरा परम धाम है। क्योंकि काल (ब्रह्म) भी उसी सतलोक से निष्कासित है। इसलिए कहता है कि मेरा परम धाम (वास्तविक ठिकाना) भी वही सतलोक है।

अध्याय 15 के श्लोक 7 में कहा है कि मेरे इस जीव लोक यानि काल लोक में आदि परमात्मा की अंश जीवात्मा ही प्रकति में स्थित मन (काल का दूसरा स्वरूप मन है) इन्द्रियों सहित ये छःओं

द्वारा आकर्षित जाती हैं।

❖ *अध्याय 15 के श्लोक 8 में कहा है कि जैसे गन्ध का मालिक वायु गन्ध को साथ रखती है (ले जाती है)। ऐसे ही पूर्ण परमात्मा अपनी जीवात्मा का स्वामी होने के कारण उसे एक शरीर से दूसरे शरीर में जो उसे (जीवात्मा को) प्राप्त हुआ है, में निराकार शक्ति द्वारा ले जाता है अर्थात् अलग नहीं होता।*

❖ *अध्याय 15 श्लोक 9 में कहा है कि यह परमात्मा (जो आत्मा के साथ है) कान-आँख व त्वचा, जिह्वा, नाक और मन के माध्यम से ही विषयों (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध) का सेवन करता है।*

❖ *अध्याय 15 के श्लोक 10 में कहा है कि मूर्ख व्यक्ति (इसी परमात्मा सहित आत्मा) को शरीर छोड़ कर जाते हुए तथा शरीर में स्थित तथा गुणों के भोगता (आनन्द लेने वाले) को नहीं जानते। जिनको सष्टि रूपी वक्ष का पूर्ण ज्ञान हो गया उन्हें ज्ञान नेत्रों वाले अर्थात् पूर्ण ज्ञानी कहते हैं। वे ही जानते हैं। विशेष प्रमाण के लिए देखें गीता जी के अध्याय 13 के श्लोक 22 से 27 में जिसमें कहा है कि तत्वदर्शी संत सही जानता है कि अविनाशी परमेश्वर जीवों को नष्ट यानि मत्यु के पश्चात् समभाव स्थित रहता है यानि मत्यु के पश्चात् अन्य शरीर में जाने से पहले तथा अन्य शरीर में प्रवेश के पश्चात् भी भिन्न नहीं होता यानि उस परमेश्वर की शक्ति अदश्य रूप में सबको प्रभावित रखती है।*

❖ *अध्याय 15 के श्लोक 11 में कहा है कि भगवत् प्राप्ति का यत्न करने वाले (प्रयत्नशील) योगी (साधक) अपनी आत्मा में स्थित परमात्मा को सही प्रकार से जानते हैं (देखते हैं) और जिनके अन्तःकरण शुद्ध नहीं हैं वे अज्ञानीजन यत्न करने पर भी इस परमात्मा को सही नहीं जानते (देखते)। पूर्ण ज्ञान होने पर प्रतिदिन महसूस होता है कि उस पूर्ण परमात्मा की आज्ञा के बिना एक पत्ता भी नहीं हिलता अर्थात् सर्व प्राणियों का आधार परमेश्वर ही है। जो नादान हैं वे सोचते हैं कि मैं कर रहा हूँ। जब यह प्राणी पूर्ण परमात्मा की शरण में आ जाता है तब पूर्ण ब्रह्म (पूर्ण परमात्मा कविर्देव) उस प्यारे भक्त के सर्व सम्भव तथा असम्भव कार्य करता है। नादान भक्तों को ज्ञान नहीं होता, जो ज्ञानवान हैं उन्हें पता होता है कि यह सर्व कार्य पूर्णब्रह्म समर्थ ही कर सकता है, जीव के वश में नहीं है। जैसे एक छोटा-सा बच्चा दीवार के साथ खड़े मूसल (काष्ठ का भारी गोल कड़ी जैसा होता है) को उठाने की चेष्टा करता है। पिता जी मना करता है तो रोने लगता है। फिर उस बच्चे को प्रसन्न करने के लिए उस मूसल को ऊपर से पकड़ कर पिता जी स्वयं उठा लेता है तथा वह अबोध बालक केवल हाथों से पकड़ कर चल देता है। पिता जी कहता है कि देखो मेरे पुत्र ने मूसल उठा लिया। फिर वह बच्चा गर्व से हँसता हुआ चलता है। मान रहा है कि मैंने मूसल उठा लिया। परंतु समझदार व्यक्ति जान जाता है कि मूसल उठाना बच्चे के वश से बाहर की बात है।*

❖ *अध्याय 15 के श्लोक 12,13 में कहा है कि जो सूर्य चन्द्रमा-अग्नि आदि में प्रकाश है। यह मेरा ही समझ और मैं (काल उस परमात्मा के नौकर की तरह) पथ्वी में प्रवेश करके उसी परमात्मा की शक्ति से सब प्राणियों को धारण करता हूँ। चन्द्रमा होकर औषधियों में रस (गुण) को प्रवेश करता हूँ (पुष्ट करता हूँ)। आदरणीय गरीबदास जी महाराज (साहेब कबीर जी के शिष्य) कहते हैं कि :-*

गरीब, काल (ब्रह्म) तो पीसे पीसना, जौरा है पनिहार।
ये दो असल मजूर (नौकर) हैं, मेरे सतगुरु (अर्थात् कबीर) के दरबार।।

भावार्थ :- ब्रह्म भगवान तो पूर्ण ब्रह्म का आटा पीसता है और जौरा (मौत) पूर्ण ब्रह्म कबीर साहेब का पानी भरती है अर्थात् ये दोनों मेरे कबीर सतगुरु (पूर्णब्रह्म) के नौकर (मजदूर) हैं। इन्हीं

के आदेशानुसार चलते हैं।

विशेष : स्वयं काल (ब्रह्म) कह रहा है कि अध्याय 15 के श्लोक 4 में कहा है कि मैं (ब्रह्म-काल) उसी परमात्मा की शरण हूँ, आश्रित हूँ। अध्याय 18 श्लोक 64 में अपना इष्टदेव भी इसी को बताया है।

❖ *अध्याय 15 के श्लोक 14 में कहा है कि मैं (ब्रह्म) सब प्राणियों के शरीर में शरण (आश्रितः) लेकर महाब्रह्मा-महाविष्णु-महाशिव रूप से सर्व कमलों में निवास करके नौकर की तरह प्राण व अपान (वायु) के आधार से संयुक्त जठराग्नि हो कर चार प्रकार से अन्न को पचाता हूँ।*

❖ *अध्याय 15 के श्लोक 15 का अनुवाद है कि मैं सब प्राणियों के हृदय में अंतर्यामी रूप से रहता हूँ और जीव को शास्त्रानुकूल विचार (मत) स्थित करता हूँ। मैं ही स्मति, ज्ञान और अपोहन (संश्य निवारण कर्त्ता) और वेदान्त कर्त्ता अर्थात् चारों वेदों को मैं ही प्रकाशित करता हूँ। भावार्थ है कि काल ब्रह्म कह रहा है कि वेद ज्ञान का दाता भी मैं ही हूँ और वेदों को जानने वाला मैं ही सब वेदों द्वारा जानने योग्य हूँ।*

इस श्लोक में ब्रह्म भगवान ने कहा है कि मैं प्राणियों के हृदय में अपना शास्त्रानुकूल ज्ञान स्थापित करता हूँ तथा उन सर्व शास्त्रों, वेद ज्ञान, स्मति आदि को मैं (ब्रह्म) जानता हूँ तथा उनमें मेरा ही विशेष ज्ञान है। इसलिए लोक व वेद में मुझको ही श्रेष्ठ भगवान जानने योग्य मानते हैं।

विशेष :- सूक्ष्मवेद में कहा है कि प्रत्येक प्राणी के अंतःकरण (हृदय) में काल ब्रह्म तथा पूर्ण ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म प्रतिबिंब की तरह विद्यमान है जैसे एक प्रसारण केन्द्र से एक प्रोग्राम करोड़ों टैलीविजनों में विद्यमान रहता है। जब तक जीव को मानव शरीर में तत्वदर्शी संत से दीक्षा नहीं मिलती, तब तक उस प्राणी पर काल ब्रह्म अपना अधिकार रखता है। पूर्ण संत से दीक्षा के पश्चात् काल ब्रह्म मैदान छोड़ जाता है। पूर्ण परमात्मा सर्व प्राणियों के कर्मानुसार भ्रमण करता है। सत्य भक्ति करने वालों को सत्यलोक यानि सनातन परम धाम में ले जाता है।

गीता अध्याय 13 श्लोक 17 में कहा है कि पूर्ण परमात्मा सर्व प्राणियों के हृदय में विशेष रूप से स्थित है। यही प्रमाण अध्याय 18 श्लोक 61 में है। इससे सिद्ध है कि सर्व प्रभु (ब्रह्मा,विष्णु, शिव व ब्रह्म तथा पूर्ण ब्रह्म) शरीर में भिन्न-2 स्थानों पर दिखाई देते हैं जबकि सर्व प्रभु जीव के शरीर से बाहर हैं, परंतु सर्व समर्थ होने से परम अक्षर ब्रह्म की शक्ति से ही सर्व कार्य होते हैं।

''तीन पुरूषों (प्रभुओं) का वर्णन''

❖ *गीता अध्याय 15 के श्लोक 16-20 का सारांश :-*

।। ब्रह्म (काल) नाशवान है।।

अध्याय 15 के श्लोक 16 का भाव है कि इस पथ्वी वाले लोक (ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्ड तथा परब्रह्म के सात शंख ब्रह्मण्ड दोनों ही पथ्वी वाला लोक कहलाता है, जैसे मिट्टी के चाहे प्याले, प्लेट, घड़े आदि बने हो, कहलाते हैं मिट्टी वाले ही) में दो प्रकार के प्रभु (पुरुष) हैं।

1. क्षर - नाशवान भगवान (ब्रह्म-काल) है।

2. अक्षर - परब्रह्म अविनाशी है तथा इन दोनों प्रभुओं के लोकों में दो ही स्थिति जीव की है। जो पंच भौतिक स्थूल शरीर है यह नाशवान है। उसमें जीव आत्मा को अविनाशी कहा है।

।। वास्तव में अविनाशी पूर्ण परमात्मा।।

क्षर पुरुष (ब्रह्म-काल) की तथा इसके इक्कीस ब्रह्मण्डों में प्राणियों की स्थिति ऐसी जानों जैसे सफेद प्याला चाय पीने वाला, वह तो स्पष्ट नाशवान दिखाई देता है। हाथ से छूटते ही जमीन पर गिरते ही टुकड़े-टुकडे हो जाता है।

दूसरा अक्षर पुरुष (कुछ अविनाशी परब्रह्म) है। जैसे स्टील (इस्पात) का बना कप हो जो अविनाशी (स्थाई) नजर आता है। कितनी बार गिरे टुकड़े-2 नहीं होता, इसलिए स्थाई धातु माना जाता है। परन्तु वास्तव में अविनाशी धातु इस्पात भी नहीं है। बहुत समय उपरान्त स्टील को जंग लगेगा तथा विनाश को प्राप्त होगा। इस प्रकार अक्षर पुरुष (परब्रह्म) को अविनाशी भी कहा है क्योंकि एक हजार बार ब्रह्म की मत्यु हो जाएगी तब एक दिन परब्रह्म (अक्षर पुरुष) का पूरा होगा। फिर इतनी ही रात्रि। इस पर तीस दिन-रात का एक महीना तथा 12 महीने का एक वर्ष तथा 100 वर्ष की आयु परब्रह्म (अक्षर पुरुष) की है। इसलिए परब्रह्म को अक्षर पुरुष कहा है, परन्तु सौ वर्ष पूरे होने पर इसकी मत्यु होगी तथा सर्व ब्रह्मण्डों का विनाश होगा। फिर नए सिरे से परब्रह्म (अक्षर पुरुष) तथा ब्रह्म (काल) के सर्व ब्रह्मण्डों की रचना पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही कर देगा।

तीसरी धातु सोना (स्वर्ण) है, जिसको जंग नहीं लगता। वास्तव में स्थाई (अविनाशी) धातु इन उपरोक्त दोनों मिट्टी तथा इस्पात से अन्य है। इसी प्रकार गीता अध्याय 15 मंत्र 17 में कहा है कि वास्तव में अविनाशी परमात्मा तो उपरोक्त दोनों पुरुषों (प्रभुओं) क्षर पुरुष (ब्रह्म) तथा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) से भी अन्य ही है जो वास्तव में अविनाशी परमात्मा परमेश्वर कहा जाता है। वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का धारण-पोषण करता है।

❖ *अध्याय 15 के श्लोक 17 का भाव है कि श्रेष्ठ परमात्मा (पुरूषो त्तम) तो क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष से कोई और ही है जो अविनाशी परमेश्वर(पूर्ण ब्रह्म) नाम से जाना जाता है तथा तीनों लोकों में प्रवेश करके सब का धारण व पालन पोषण भी वही करता है। जैसे कबीर साहेब कहते हैं कि :-*

कबीर, अक्षर पुरुष (परब्रह्म) एक पेड़ है, निरंजन (ब्रह्म) वाकि डार।
तीनों देवा (ब्रह्मा–विष्णु–महेश) शाखा हैं, पात रूप संसार।।
कबीर, हम ही अलख अल्लाह हैं, मूल रूप करतार।
अनन्त कोटि ब्रह्मण्ड का, मैं ही सिरजनहार।।

इसमें स्पष्ट है कि अक्षर पुरुष तो पेड़ (तना) जो जमीन से ऊपर नजर आता है फिर उसके कोई मोटी डाली (डार) क्षर (काल-ब्रह्म) जानों। तीनों देवता ब्रह्मा-विष्णु-शंकर शाखा और छोटी टहनियाँ हैं तथा पत्ते रूप में सर्व संसार है।

यहां पर मूल (जड़) निःअक्षर (अविनाशी परमात्मा पूर्ण ब्रह्म जो दिखाई नहीं देता) है। इसलिए आगे कबीर साहेब कहते हैं :--

कबीर, एकै साधै सब सधै, सब साधै सब जाय। माली सीचैं मूल को, फूलै–फलै अघाय।।

इस वाणी का भाव है कि एक जड़ (मूल) रूपी पूर्णब्रह्म की सेवा साधना से सर्व वक्ष प्रफूलित (हरा-भरा)रहता है। तना (परब्रह्म-अक्षर) व डार (ब्रह्म) साखा (ब्रह्मा-विष्णु-महेश) की पूजा से (पानी डालने से) वह सारा पौधा सूख जाएगा अर्थात् साधना व्यर्थ जाएगी। आदरणीय गरीबदास जी महाराज कहते हैं कि :-

कर्म भ्रम भारी लगे, संसा सूल बंबूल। डाली पानों डोलते, परसत नाहीं मूल।।

इसलिए एक ही परमेश्वर (सतपुरुष, कबीर साहेब) की शरण लेकर पूर्ण मुक्त हो सकते हैं व काल जाल से बच सकते हैं।

इसी का प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 में वक्ष का उदाहरण देकर कहा है।

अध्याय 15 के श्लोक 16,17 का भावार्थ जानने के लिए यह उपरोक्त उदाहरण ध्यान से पढ़े फिर सोचें। क्योंकि काल, ब्रह्मा, विष्णु, शंकर व माई से ज्यादा शक्तिशाली (एक हजार भुजाओं का) है इसलिए तीन लोक के प्राणी इसे (काल को) ही पुरुषोत्तम मानते हैं। केवल इसी लिए श्लोक 18 में पुरुषोत्तम कहा है।

अध्याय 15 के श्लोक 18 का भाव है कि काल (ब्रह्म) कह रहा है कि मैं पंच भौतिक स्थूल शरीर में जो नाशवान (क्षर) प्राणि है उनसे तथा जीवात्मा (जो अविनाशी है) से शक्तिशाली हूँ। इसलिए मुझ (काल-ब्रह्म) को ही श्रेष्ठ (पुरुषोत्तम) भगवान जानते हैं। वास्तव में पूर्ण अविनाशी व उत्तम पुरुष तो अन्य ही है। जिसका वर्णन उपरोक्त श्लोक 17 में है।

मेरे इक्कीस ब्रह्मण्डों में सर्व प्राणियों से शक्तिशाली हूँ। वे चाहे स्थूल शरीर में नाशवान गुणों वाले हैं तथा चाहे जीवात्मा में अविनाशी गुणों युक्त हैं। इन सर्व का मालिक हूँ, इसलिए लोक वेद के आधार पर मुझे पुरुषोत्तम मानते हैं। परन्तु वास्तव में पुरुषोत्तम तो कोई और ही है। जिसका वर्णन उपरोक्त श्लोक 17 में है।

लोक वेद :- लोकवेद क्षेत्रीय सुने सुनाए शास्त्र विरुद्ध ज्ञान को कहते हैं। जैसे किसी क्षेत्र में दुर्गा जी की पूजा का महत्व ज्यादा है। किसी क्षेत्र में श्री हनुमान जी की, किसी क्षेत्र में श्री गणेश जी की, किसी क्षेत्र में श्री खाटू श्याम जी की, किसी में श्री राम और किसी में श्री कष्ण जी की पूजा का जोर केवल लोकवेद के आधार पर होता है। जैसे अभी तक एक ब्रह्मण्ड का भी ज्ञान पूर्ण नहीं था। न ब्रह्मा जी को, न श्री विष्णु जी को व न श्री शिव जी को एक ब्रह्म की भी पूर्ण जानकारी नहीं थी। श्री देवीभागवत महापुराण के तीसरे स्कंद में अपने पुत्र श्री नारद जी के पूछने पर कि एक ब्रह्मण्ड की उत्पत्ति कैसे हुए, श्री ब्रह्मा जी ने बताया कि बेटा नारद मुझे नहीं मालूम मैं कमल के फूल पर कैसे उत्पन्न हुआ? मुझे पैदा करने वाला कौन है? फिर तीनों ब्रह्मा - विष्णु - शिव जी को दुर्गा ने एक विमान में बैठाकर ब्रह्मलोक में भेजा। वहाँ एक-एक ब्रह्मा - विष्णु - शिव और देखकर आश्चर्य में पड़ गए। फिर देवी के पास जाकर ब्रह्मा जी - विष्णु जी - शिव जी स्वयं स्वीकार कर रहे हैं कि हम तो जन्म तथा मत्यु में नाशवान हैं, हम अविनाशी नहीं हैं। हमारा तो आविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मत्यु) होता है। इसके विपरित लोक वेद के आधार पर इन्हीं तीनों प्रभुओं को अजर-अमर, सर्वेश्वर, महेश्वर, अजन्मा, वासुदेव, इनके माता-पिता नहीं आदि उपमा से जानते थे। इन्हीं की पूजा को अन्तिम मान रखा था। जबकि पवित्र गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 तक तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव जी) की पूजा करने वालों को मूर्ख - राक्षस स्वभाव वाले, मनुष्यों में नीच, दुष्कर्म करने वाले कहा है। लोक वेद (क्षेत्रीय शास्त्र विरुद्ध ज्ञान) के आधार पर वेदों को पढ़ने वाले ऋषि जिनको तत्वदर्शी संत नहीं मिला स्वयं ही निष्कर्ष निकाल कर ब्रह्म (काल) को पुरुषोत्तम कहते रहे। पूर्ण परमात्मा कविर् देव स्वयं ही अपनी महिमा बताते हैं तथा सत्य ज्ञान (स्वस्थ ज्ञान) को स्वयं संदेशवाहक बन कर लाते हैं। (यजुर्वेद अध्याय 29 मंत्र 25 में प्रमाण है।) तब स्वयं ही साधक, प्रभु तथा सतगुरु की भूमिका अदा करते हैं। दोहा :

कबीर पीछे लागा जाऊँ था, लोक वेद के साथ। रास्ते में सतगुरु मिलें, दीपक दे दिया हाथ।।

उपरोक्त अमतवाणी का भावार्थ है :- यह दास पहले श्री हनुमान जी, श्री खाटू श्याम जी तथा

श्री विष्णु जी अर्थात् श्री कष्ण जी, श्री रामचन्द्र जी आदि का पक्का पूजारी था। व्रत रखना आदि सर्व शास्त्र विधि रहित साधना कर रहा था। 17 फरवरी सन् 1988 के शुभ दिन तत्वदर्शी परम संत पूज्य गुरुदेव स्वामी रामदेवानन्द जी महाराज ने यह तत्वज्ञान रूपी दीपक प्रदान कर दिया जिसकी रोशनी से पता चला कि गलत मार्ग जा रहा था। सर्व पूजा अपने ही पवित्र शास्त्रों (पवित्र गीता जी व पवित्र चारों वेदों) के विपरित कर रहा था जो लोक वेद के आधार पर ही कर रहा था। इसलिए उपरोक्त अमतवाणी में प्रभु कबीर साहेब जी हमें समझाने के लिए कह रहे हैं कि तुम लोकवेद के आधार पर शास्त्रविरुद्ध साधना कर रहे हो, अब इस तत्वज्ञान के आधार पर शास्त्र विधि अनुसार पूर्ण संत से उपदेश प्राप्त करके अपना कल्याण करवाओ। व्यर्थ साधना मत करो।

पूर्ण परमात्मा एक भोले - भाले साधक की भूमिका करके कह रहे हैं कि मैं पहले लोकवेद (शास्त्र विरुद्ध सुना सुनाया ज्ञान) के आधार से साधना कर रहा था, पूर्ण संत (तत्वदर्शी संत) मिले, जिन्होंने वास्तविक पूजा विधि तथा तत्वज्ञान रूपी दीपक प्रदान कर दिया। अब तत्वज्ञान के प्रकाश में मार्ग नहीं भूलेंगे।

गीता अध्याय 15 श्लोक 19 का भावार्थ है कि हे अर्जुन जो ज्ञानी आत्मा तत्वदर्शी सन्त के अभाव से मुझे श्लोक 18 के आधार से पुरूषोत्तम जानता है वह मुझे ही पूर्ण प्रभु, जानकर भजता है। इसलिए गीता ज्ञान दाता प्रभु ने गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में कहा है कि ये सर्व ज्ञानी आत्मा है तो उद्धार परन्तु तत्वदर्शी सन्त के अभाव से मुझे पूर्ण परमात्मा जानकर भजते हैं। जिस कारण से मेरी अनुत्तम भक्ति अर्थात् अश्रेष्ठ मोक्ष में ही लीन हैं।

।। गीता एक शास्त्र है ।।

अध्याय 15 के श्लोक 20 में कहा है कि हे निष्पाप अर्जुन! यह अति रहस्ययुक्त गोपनीय शास्त्र मेरे द्वारा कहा गया है। इसको सही तरीके से जो जान लेता है वह तत्वदर्शी सन्त के पास जाकर ज्ञानवान (पूर्ण ज्ञानी) हो जाएगा तथा (काल-जाल से निकल जाएगा) धन्य-धन्य हो जाता है।

वह गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में वर्णित तत्वदर्शी सन्त की खोज करके धन्य हो जाएगा। पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) को प्राप्त करने की विधि काल भगवान ने कहीं पर नहीं कही है। जो यज्ञों व ऊँ मन्त्र के जाप का वर्णन है वह केवल स्वर्ग प्राप्ति तथा महास्वर्ग प्राप्ति का है न कि पूर्णब्रह्म व पूर्ण मुक्ति का। इसलिए वह ज्ञानी पुरुष जो यह जान भी लेगा कि कोई पालनकर्त्ता तथा दयालु भगवान तो अन्य ही है। लेकिन पहुँच से बाहर होने के कारण फिर काल साधना करता हुआ काल के जाल में ही रहेगा। उस पूर्ण परमात्मा की भक्ति विधि व पूर्ण ज्ञान को प्राप्त करने के लिए गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में।

<u>प्रश्न</u> : एक भक्त ने कहा कि फल तो टहनियों से ही मिलता है, जड़ (मूल) से नहीं?

<u>उत्तर</u> : फल तो टहनियों ने ही देने हैं परंतु सेवा (पूजा) जड़ (मूल) की ही करनी पड़ेगी। यदि जड़ में पानी नहीं डालेंगे तो भक्ति रूपी पौधा सूख जाएगा। इसलिए जड़ में खाद-पानी डालने से टहनियाँ अपने आप फल देंगी।

नोट :- कपा देखें भक्ति रूपी पौधे का चित्र सोलहवें अध्याय में इसी पुस्तक के पष्ठ 250 पर।

तत्वज्ञान के अभाव से सर्व श्रद्धालुओं ने भक्ति रूपी पौधे को टहनियों की तरफ से जमीन में लगा रखा था। मूल (जड़) ऊपर को कर रखी थी। इसलिए संकेत किया है कि भक्ति रूपी पौधे को सीधा लगाओ। जड़ (मूल) अर्थात् पूर्ण परमात्मा की पूजा करो जिससे खुराक तीनों गुण (रजगुण

ब्रह्मा - सतगुण - विष्णु - तमगुण - शिव) रूपी टहनियों तक पहुँचेगी, फिर भक्ति रूपी फल लगेगा। बिना मांगे ही तीनों प्रभु आप को कर्माधार पर सर्व सुविधा प्रदान करेंगे। इसी का प्रमाण गीता अध्याय 3 श्लोक 10 से 15 तक है कहा है कि परमात्मा सष्टि उत्पन्न करके सब को यज्ञ (शास्त्रानुसार भक्ति कर्म) करने को कहा था तथा कहा था कि शास्त्रानुकूल साधना पूर्ण परमात्मा की करो जो यज्ञों में प्रतिष्ठित है जिस से ब्रह्म की उत्पति हुई। इस प्रकार इन देवताओं को उन्नत करो। वे उन्नत हुए देवता तुम्हे बिना मांगे ही सर्व सुख प्रदान करेंगे।

दूसरा उदाहरण :- मान लिजिए आपको सरकारी नौकरी चाहिए। आप अपने राजा (मुख्यमंत्री) की पूजा करोगे अर्थात् प्रार्थना-पत्र लिखोगे। फिर आप की प्रार्थना (पूजा) स्वीकार करके मुख्यमंत्री जी आपकी नौकरी किसी विभाग में लगा देगा। फिर भी पूजा - नौकरी (सेवा) मुख्यमंत्री जी की (सरकार की) ही करते रहोगे। परन्तु आप को मुख्यमंत्री जी द्वारा निर्धारित मेहनताना (आय) अधिकारी देंगे। वे भी उसी मालिक के उच्च नौकर होते हैं। यदि आप उन उच्च अधिकारियों की ही पूजा करते रहते तो वे आपको केवल चाय-पानी पिला सकते थे। जिससे आप का निर्वाह नहीं चलता। परन्तु साकार की पूजा (नौकरी)करने पर वे आप के जान-पहचान वाले अधिकारीगण आप को सर्व सुविधा प्रदान करेंगे, इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) की पूजा करने से तीनों देवता श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी आपको आपका केवल मेहनताना (किया कर्म) देते रहेंगे। यदि आपने पूर्ण परमात्मा की पूजा (नौकरी) त्याग दी तो सर्व सुविधाऐं बन्द हो जायेंगी। कृप्या देखें इसी पुस्तक के पष्ठ 234 पर संसार रूपी वक्ष का चित्र।

इसलिए पूर्णब्रह्म सतपुरुष ही पूजा के योग्य है। सर्व यज्ञों में प्रतिष्ठित अर्थात् सर्व धार्मिक कार्यों में उसी को मुख्य रख कर सर्वयज्ञ करनी चाहिये। फिर वही परमात्मा आपको सर्व सुविधाऐं प्रदान अपने अन्य प्रभुओं द्वारा करवाएगा। वह पूर्ण परमात्मा भाग्य से ज्यादा भी दे देता है। परन्तु अन्य प्रभु केवल कर्माधार ही प्रदान कर सकते हैं। जैसे अपने कर्मचारी को मुख्यमंत्री जी निर्धारित मेहनताना (आय) से अतिरिक्त बोनस भी दे देता है। परन्तु अधिकारी केवल निर्धारित तनख्वाह (आय) ही दे सकते हैं। ठीक इसी प्रकार तत्वज्ञान को जानकर पूर्ण संत की तलाश करके उपदेश प्राप्त करके आत्म कल्याण अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करें।

❑❑❑

पंद्रहवें अध्याय के सर्व श्लोकों का हिन्दी अनुवाद

❖ *अध्याय 15 के श्लोक 1 का अनुवाद :- ऊपर को पूर्ण परमात्मा यानि आदि पुरूष परमेश्वर रूपी जड़ वाला, नीचे को तीनों गुणों अर्थात् रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु व तमगुण शिव रूपी शाखा वाला अविनाशी विस्तारित पीपल का वक्ष है जिसके जैसे वेद छन्द हैं, ऐसे संसार रूपी वक्ष के भी छोटे-छोटे विभाग छोटे-छोटे हिस्से टहनियाँ तथा पत्ते कहे हैं। उस संसार वक्ष को जो व्यक्ति विस्तार से जानता है यानि सर्व विभागों को जानता है, वह व्यक्ति वेद वित है यानि वेद के तात्पर्य को जानने वाला अर्थात् तत्वदर्शी संत है।(15/1)*

भावार्थ :- गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा है कि हे अर्जुन! पूर्ण परमात्मा के ज्ञान को जानने वाले तत्वदर्शी संतों के पास जाकर उनसे तत्वज्ञान समझ। मैं उस परम अक्षर ब्रह्म की प्राप्ति का मार्ग नहीं जानता। इसी अध्याय 15 के श्लोक 3 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि इस संसार रूपी वक्ष के विस्तार को मैं नहीं जानता अर्थात् इसकी रचना कब हुई और कब अंत होगा। इसके विषय में इसी गीता के ज्ञान के विचार जो तेरे को बता रहा हूँ, तुझे संसार की रचना व अंत को नहीं बता सकता क्योंकि मुझे इसकी स्थिति का ज्ञान नहीं है। इसको तत्वदर्शी संत जानते हैं। तत्वदर्शी संत की पहचान इस अध्याय 15 के श्लोक 1 में बताई है कि जो संत संसार रूप वक्ष के सर्वांग भिन्न-भिन्न बताए, वह तत्वदर्शी संत है। परमेश्वर कबीर जी ने तत्वदर्शी संत की भूमिका करके अपने द्वारा रची संष्टि का ज्ञान स्वयं बताया है कि :-

कबीर, अक्षर पुरूष एक पेड़ है, क्षर पुरूष वाकि डार।
तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।।
कबीर, हम ही अलख अल्लाह हैं, मूल रूप करतार।
अनन्त कोटि ब्रह्मण्ड का, मैं ही संजनहार।।

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने बताया कि अक्षर पुरूष को वक्ष जानो। क्षर पुरूष यानि ज्योति निरंजन को वक्ष की मोटी डार समझें। तीनों देवताओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) को डार पर लगी शाखा जानों। इन शाखाओं को लगे पत्ते जीव-जंतु यानि प्राणी जानो। मुझे यानि परम अक्षर ब्रह्म कबीर जी को मूल (जड़) जानो। अनन्त करोड़ ब्रह्माण्डों वाले संसार की रचना मैंने की है। मैं ही अलख अल्लाह यानि अव्यक्त परमात्मा हूँ। परम अक्षर ब्रह्म हूँ। पाठक कपा देखें संसार रूपी वक्ष का चित्र इसी पुस्तक के पष्ठ 234 पर।

जैसा कि अध्याय 4 श्लोक 32 तथा 34 में कहा है कि पूर्ण परमात्मा अपने मुख से वाणी बोलकर सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान यानि तत्वज्ञान विस्तार से बताते हैं। तत्वदर्शी संत उसका प्रचार करते हैं। वह तत्वदर्शी संत वर्तमान में मेरे (रामपाल दास के) अतिरिक्त कोई नहीं है।

❖ *गीता अध्याय 15 श्लोक 2 का अनुवाद :- उस संसार रूपी वक्ष की नीचे पाताल लोक, ऊपर स्वर्ग लोक में भी तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव) रूपी शाखाऐं फैली हुई हैं। काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार रूपी कोपल हैं। ये तीनों देवता रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव सब प्राणियों को कर्मों के अनुसार बाँधे रखने की मूल कारण हैं जो नरक-स्वर्ग ऊपर,पथ्वी लोक पर यह ज्ञान बताया गया है। नीचे पाताल लोक आदि-आदि व्यवस्थित किए हुए हैं।(15/2)*

❖ *गीता अध्याय 15 श्लोक 3 का अनुवाद :- गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि संसार की रचना का न आदि यानि प्रारम्भ है तथा न अंत है। और न वैसा इसका वास्तविक स्वरूप पाया जाता है। और यहाँ विचार काल में अर्थात् तेरे मेरे इस गीता ज्ञान के विचार-विमर्श में नहीं पाया जाता यानि सर्व ब्रह्माण्डों की यथास्थिति से मैं परिचित नहीं हूँ।*

इस दृढ़ मूल वाले पीपल के वृक्ष की सम्पूर्ण स्थिति को समझने के लिए तत्वज्ञान को जानें। उस तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से अज्ञान को काटकर।(15/3)

विशेष :- सुविरूढ़मूलम् का भावार्थ है कि संसार रूपी वृक्ष की जड़ यानि पूर्ण परमात्मा अविनाशी है। उसको जानने के लिए तत्वज्ञान दृढ़ शस्त्र है क्योंकि यदि सूखी लकड़ी को काटना है तो लोहे की दृढ़ आॅरी या कुल्हाड़ी का प्रयोग करना पड़ेगा। इसी प्रकार तत्वज्ञान में ही संसार की रचना का विस्तत ज्ञान स्वयं परमेश्वर जी ने बताया है। उसी से तत्वज्ञान समझकर .....(शेष श्लोक 4 में)

❖ *गीता अध्याय 15 श्लोक 4 का अनुवाद :- तत्वज्ञान समझने के पश्चात् उस मूल रूप परमेश्वर के परम पद यानि सतलोक की खोज करनी चाहिए जिसमें गए हुए साधक लौटकर संसार में कभी नहीं आते ओर जिस परमेश्वर यानि परम अक्षर पुरूष से पुरानी यानि आदि वाली सष्टि उत्पन्न हुई है। उस सनातन पूर्ण परमात्मा की ही शरण में मैं हूँ यानि मेरा पूज्य परमेश्वर (इष्ट देव) भी वही है। पूर्ण निश्चय के साथ उसी परमात्मा की भक्ति (पूजा) करनी चाहिए।*

❖ *गीता अध्याय 15 श्लोक 5 का अनुवाद :- तत्वज्ञान को प्राप्त साधक काल लोक यानि इस संसार की सर्व वस्तुओं से आसक्ति हटा लेता है। किसी पद की इच्छा नहीं करता। वह पथ्वी के राज की इच्छा तो करता ही नहीं। स्वर्ग प्राप्ति की इच्छा तो क्या करेंगे, स्वर्ग के राजा इन्द्र की पदवी भी नहीं चाहता क्योंकि सूक्ष्मवेद यानि तत्वज्ञान में परमेश्वर जी ने बताया है कि :-*

इन्द्र का राज काग दा बिस्टा (बींट), ना चाहे इन्द्राणी नूँ।
विषवासन त्याग देत है, जाका ध्यान लगा निर्बाणी नूँ।।

भावार्थ :- तत्वज्ञान में बताया है कि काल ब्रह्म तक की पूजा साधना करके साधक यदि स्वर्ग के राजा इन्द्र की पदवी भी प्राप्त कर लेता है तो उस पद को भोगकर इन्द्र की मत्यु हो जाती है। वह पुनरावर्ती में आता है। गधे का शरीर प्राप्त करता है। फिर अन्य प्राणियों के शरीरों में भी कष्ट भोगता है क्योंकि काल ब्रह्म का सिद्धांत है कि जैसे कर्म प्राणी करता है, उन सबका भोग भोगता है। पुण्य कर्मों का भोग स्वर्ग में व पथ्वी पर राज पद प्राप्त करके या धनी व्यक्ति बनकर भोगता है। पाप कर्म नरक में तथा पथ्वी पर निर्धन, घसीयारा बनकर तथा अन्य प्राणियों के शरीरों में भोगते हैं। परंतु सनातन परम धाम यानि सतलोक गए साधक फिर लौटकर संसार में नहीं आते। सत्यलोक का स्वर्ग सुख काल लोक के सर्वोत्तम स्वर्ग यानि ब्रह्म लोक के सुख से असँख्यों गुणा अधिक सुख है। सतलोक में गए साधक का वह सुख शाश्वत् यानि कभी न समाप्त होने वाला है क्योंकि सतलोक परमेश्वर का वह परम पद है जिसमें गए साधक कभी लौटकर संसार में नहीं आते। इसलिए तत्वज्ञान प्राप्त विद्वान उस अविनाशी पद यानि सतलोक स्थान को चले जाते हैं।

❖ *गीता अध्याय 15 श्लोक 6 का अनुवाद :- इस श्लोक 6 में सतलोक की महिमा बताई है। कहा है कि परमेश्वर के जिस परम पद को प्राप्त होकर साधक लौटकर संसार में नहीं आते, वह स्वयं प्रकाशित परम पद है। उस स्वप्रकाशित सतलोक को न सूर्य प्रकाशित कर सकता है क्योंकि उस स्थान का अपना प्रकाश असँख्यों सूर्यों के प्रकाश से भी अधिक है। न चन्द्रमा, न अग्नि ही प्रकाशित*

कर सकते हैं। (तत्) वह (धाम) सतलोक (मम) मेरे धाम से (परमम्) श्रेष्ठ है।

❖ *गीता अध्याय 15 श्लोक 7 का अनुवाद :- मतलोक में सनातन परमात्मा का अंश जीवात्मा ही प्रकति स्थित मेरे द्वारा मन (काल का सूक्ष्म रूप मन है) तथा पाँचों ज्ञान इन्द्रियों सहित इन छःओं के माध्यम से आकर्षित की जाती है।(15/7)*

❖ *गीता अध्याय 15 श्लोक 8 का अनुवाद :- जैसे हवा गंध को इधर-उधर ले जाती है क्योंकि गंध की मालिक वायु है। इसी प्रकार (ईश्वरः) सब ईशों में श्रेष्ठ प्रभु यानि परमेश्वर भी इस जीवात्मा को इन पाँचों इन्द्रियों तथा मन सहित सूक्ष्म शरीर ग्रहण करके जीवात्मा जिस पुराने शरीर को त्यागकर और जिस नए शरीर को प्राप्त होता है, उसके संस्कारवश ले जाता है। गीता अध्याय 18 श्लोक 61 में भी यह वर्णन है कि शरीर रूप यंत्र में आरूढ़ हुए सम्पूर्ण प्राणियों को (ईश्वरः) अन्तर्यामी परमेश्वर अपनी माया उनके कर्मों के अनुसार भ्रमण करता हुआ सब प्राणियों के हृदय में (तिष्ठति) विद्यमान है यानि बैठा है। जैसे टी.वी. पर कार्यक्रम प्रसारण केन्द्र पर मूल रूप में होता है। वहाँ से सर्व टेलीविजनों में भी विद्यमान होता है। वास्तव एंकर (समाचार सुनाने वाला कर्मचारी) प्रसारण केन्द्र में विद्यमान रहता है। वही सब टैलिविजनों में भी बैठा होता है। ऐसे ही परमेश्वर भी सब प्राणियों के हृदय में दिखाई देता है। मूल रूप से सतलोक में रहता है।(15/8)*

विशेष विवेचन :- गीता के इस अध्याय 15 के श्लोक 8 में मेरे (रामपाल दास के) अतिरिक्त गीता के अन्य अनुवादकों ने फिर गलती कर रखी है। इस श्लोक के मूल पाठ में ''ईश्वरः'' शब्द है। इसका अर्थ जीवात्मा किया है जो गलत है। इससे तो यह सिद्ध कर दिया कि जीव ही परमात्मा है जो उचित नहीं है।

❖ *गीता अध्याय 15 श्लोक 9 का अनुवाद :- यह परमात्मा का अंश जीवात्मा जब तक तत्वदर्शी संत से दीक्षा लेकर साधना नहीं करता, तब भी परमात्मा की शक्ति उसके साथ रहती है, परंतु परमात्मा उसके कर्म भोग में भागी नहीं होता। जो भी पाँचों ज्ञान इन्द्रियों व पाँचों कर्म इन्द्रियों द्वारा किए कर्म का फल कर्मों के अनुसार जीवात्मा ही भोगता है, परंतु आनंद भी जीवात्मा ही लेता है।(15/9)*

❖ *गीता अध्याय 15 श्लोक 10 का अनुवाद :- अज्ञानीजन इस परमात्मा तथा आत्मा के अभेद सम्बन्ध को नहीं जानते, ज्ञानीजन जानते हैं।(15/10)*

❖ *गीता अध्याय 15 श्लोक 11-15 का अनुवाद :- श्लोक 11 से 15 तक गीता ज्ञान दाता क्षर पुरूष अपनी स्थिति बता रहा है कि मेरे इक्कीस ब्रह्मण्डों में मेरे आधीन सर्व प्राणियों का आधार मैं हूँ। इन ब्रह्मण्डों में जितने भी प्रकाश स्रोत हैं, उन्हें मेरे ही जान। इन सबको मैं ही रचता हूँ। मैं ही महाप्रलय में इनको नष्ट कर देता हूँ। मैं ही वेदों को बोलने वाला ब्रह्म हूँ। वेदों के मत वेदान्त का कर्ता मैं ही हूँ। चारों वेदों को मैं ही ठीक से जानता हूँ अर्थात् चारों वेदों में मेरी ही भक्ति विधि का ज्ञान है। विचार करें :- जैसे इसी अध्याय 15 के पूर्व के श्लोकों में उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वक्ष कहा है। उसकी मूल रूप परमेश्वर यानि परम अक्षर पुरूष है। उसका तना अक्षर पुरूष है तथा डार क्षर पुरूष यानि काल ब्रह्म है जो गीता का ज्ञान दे रहा है। तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव जी) शाखाऐं हैं तथा इन शाखाओं को लगे टहनियाँ और पत्ते काल ब्रह्म का संसार है। सर्व प्राणी हैं। वक्ष को आहार जड़ से मिलता है। जड़ (मूल) रूप परम पुरूष है। वही आहार तना रूप अक्षर पुरूष को प्राप्त होता है। वही आहार मोटी डार रूप क्षर पुरूष को प्राप्त होता है। वही आहार तीनों देवताओं रूप शाखाओं को प्राप्त होता है। फिर टहनियों और पत्तों रूप*

प्राणियों तक जाता है। पाठकजन इस उदाहरण से आसानी से क्षर पुरूष यानि गीता ज्ञान दाता की स्थिति को समझ जाऐंगे कि वास्तव में सर्व का धारण करने वाला तथा पोषण करने वाला परम अक्षर पुरूष है जिसका वर्णन अध्याय 8 के श्लोक 3, 8-10, 20-22 में भी है। इस अध्याय 15 के श्लोक 15 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मैं सब प्राणियों के हृदय में स्थित हूँ। यह काल ब्रह्म भी इस काल लोक के प्राणियों के हृदय में महाशिव रूप में दिखाई देता है। गीता अध्याय 13 श्लोक 17 में स्पष्ट है कि वह पूर्ण परमात्मा सर्व प्राणियों के हृदय में (विष्ठितम्) विशेष रूप से स्थित है। गीता अध्याय 18 श्लोक 61 में भी यही प्रमाण है जिसका वर्णन पहले इसी अध्याय 15 के श्लोकों में किया गया है। जैसे एक प्रान्त के मुख्यमंत्री की अपने प्रान्त में ही सत्ता है। देश के प्रधानमंत्री की सर्व प्रान्तों मे ंसत्ता है। इसी प्रकार काल ब्रह्म और परम अक्षर ब्रह्म दोनों ही काल लोक के प्राणियों के हृदय में दिखाई देते हैं।

❖ *गीता अध्याय 15 श्लोक 16-20 का सारांश इसी अध्याय के सारांश में कर रखा है, वहाँ पढ़ें।*

❑❑❑